प्रज्ञापना सूत्र : एक परिचय

श्री प्रकाशचन्द जैन

श्यामाचार्य द्वारा रचित प्रज्ञापनासूत्र एक प्रमुख उपांगसूत्र है। अंगसूत्रों में जो स्थान व्याख्याप्रज्ञप्ति का है वही स्थान उपांगसूत्रों में प्रज्ञापना सूत्र का है। व्याख्याप्रज्ञप्ति के लिए जहाँ भगवती नाम प्रचलित है, वहाँ प्रज्ञापना के लिए भगवती विशेषण प्रयुक्त हुआ है। इसके ३६ पदों में द्रव्यानुयोग की विषयवस्तु का निरूपण हुआ है, जिसका संक्षेप में निरूपण श्री महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ, जलगांव के प्राचार्य श्री प्रकाशचन्द जी जैन ने इस आलेख में किया है। **–सम्पादक**

"अत्थं भासइ अरहा, सुत्तं गंथंति गणहरा निउणं" अर्थात् तीर्थंकर भगवान अर्थ रूप आगम की प्ररूपणा करते हैं और उन्हीं के व्युत्पन्नमति सुशिष्य चतुर्दश पूर्वधर गणधर उस अर्थ रूप आगम वाणी को सूत्र रूप में गूँथते हैं, जिन्हें अंगसूत्र के नाम से पुकारा जाता है। उन्हीं अंग सूत्रों के आधार पर विषय को विशद करने हेतु कम से कम दस पूर्वधर आचार्यों के द्वारा रचे गये सूत्र उपांग कहलाते हैं। उन उपांगों में चतुर्थ उपांग प्रज्ञापना सूत्र है।

अंगसूत्रों में जो स्थान भगवती सूत्र का है, उपांग सूत्रों में वही स्थान प्रज्ञापना का है। प्रज्ञापना का अर्थ है-- जीव-अजीव के संबंध में प्ररूपणा। इस सूत्र की रचना आचार्य श्याम ने की है। इसका एक ही अध्ययन है। इसके कुल ३६ पद हैं जिनमें जैन सिद्धान्तों का विस्तृत विवेचन किया गया है। इसकी रचना प्रश्नोत्तर शैली में हुई है। आचार्य मलयगिरि इसे समवायांग का उपांग मानते हैं जबकि आचार्य श्याम इसे दृष्टिवाद का निष्कर्ष कहते हैं। भगवती में अनेक स्थलों पर पन्नवणा की भोलावण दी गई है। इससे प्रज्ञापना की गहनता और व्यापकता स्पष्टतः परिलक्षित होती है।

प. दलसुख मालवणिया आदि विद्वान दिगम्बर परम्परा के आगम षट्खण्डागम की तुलना प्रज्ञापना से करते हैं, क्योंकि दोनों ही आगमों का मूलस्रोत पूर्वज्ञान है। दोनों का विषय जीव और कर्म का सैद्धान्तिक दृष्टि से विश्लेषण करना है। दोनों में अल्पबहुत्व, अवगाहना, अन्तर आदि अनेक विषयों का समान रूप से प्रतिपादन किया गया है।

इस सूत्र के ३६ पदों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:—

1. प्रथम पद **प्रज्ञापना** में प्रज्ञापना के दो भेद— अजीव व जीव प्रज्ञापना। अजीव प्रज्ञापना में अरूपी अजीव और रूपी अजीव ये दो भेद बताए हैं। जीव प्रज्ञापना में संसारी और सिद्ध जीव के २ भेद बताकर सिद्धों के १५ प्रकार तथा संसारी जीवों के भेद—प्रभेद बताए हैं।
2. द्वितीय **स्थानपद** में पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेंद्रिय, नैरयिक, तिर्यंच, भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक और सिद्ध जीवों के आवासस्थान का वर्णन है। निवास स्थान दो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकार के हैं– १. स्वस्थान–जहां जीव जन्म से मृत्यु तक रहता है २. प्रासंगिक वासस्थान (उपपात, समुद्घात)

3. तृतीय **अल्पबहुत्व** पद में दिशा, गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, लेश्या, सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, संयत, उपयोग, आहार, भाषक, परीत, पर्याप्त, सूक्ष्म, संज्ञी, भव, अस्तिकाय, चरम, जीव, क्षेत्र, बन्ध, पुद्गल और महादण्डक इन २७ द्वारों की अपेक्षा से जीवों के अल्पबहुत्व का विचार किया गया है।
4. चतुर्थ **स्थितिपद** में नैरयिक, भवनवासी, पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, मनुष्य, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक जीवों की स्थिति का वर्णन है।
5. पंचम **विशेषपद** या **पर्यायपद** में चौबीस दण्डकों के नैरयिक से वैमानिक तक की पर्यायों की विचारणा की गई है। इसके बाद अजीव पर्याय के भेद–प्रभेद तथा अरूपी अजीव व रूपी अजीव के भेद–प्रभेदों की अपेक्षा से पर्यायों की संख्या की विचारणा की गई है।
6. छठे **व्युत्क्रान्ति** पद में बारह मुहूर्त और चौबीस मुहूर्त का उपपात और मरण संबंधी विरहकाल क्या है? कहां जीव सान्तर उत्पन्न होता है, कहां निरन्तर? एक समय में कितने जीव उत्पन्न होते हैं और मरते हैं? कहां से आकर उत्पन्न होते हैं? मरकर कहां जाते हैं? परभव की आयु कब बंधती हैं? आयु बन्ध संबंधी आठ आकर्ष कौनसे हैं? इन आठ द्वारों से जीव प्ररूपणा की गई है।
7. सातवें **उच्छ्वास** पद में नैरयिक आदि के उच्छ्वास ग्रहण करने और छोड़ने के काल का वर्णन है।
8. आठवें **संज्ञा** पद में जीव की आहार, भय, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, लोक और ओघ इन दस संज्ञाओं का २४ दण्डकों की अपेक्षा निरूपण किया गया है।
9. नौवें **योनि** पद में जीव की शीत, उष्ण, शीतोष्ण, सचित्त, अचित्त, मिश्र, संवृत, विवृत, संवृतविवृत, कूर्मोन्नत, शंखावर्त, वंशीपत्र इन योनियों के आश्रय से समग्र जीवों का विचार किया गया है।
10. दसवें **चरम-अचरम** पद में चरम है, अचरम है, चरम है (बहुवचन) अचरम है, चरमान्त प्रदेश है, अचरमान्त प्रदेश है, इन ६ विकल्पों को लेकर २४ दण्डकों के जीवों का गति आदि की दृष्टि से तथा विभिन्न द्रव्यों का लोक–अलोक आदि की अपेक्षा विचार किया गया है।
11. ग्यारहवें **भाषा** पद में भाषा किस प्रकार उत्पन्न होती है? कहां पर रहती है? उसकी आकृति किस प्रकार की है? उसका स्वरूप, बोलने वाले आदि के प्रश्नों पर विचार किया है। साथ ही सत्य भाषा के दस, मृषाभाषा के दस, सत्यामृषा के दस तथा असत्यामृषा के १६ प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बताये हैं। अन्त में १६ प्रकार के वचनों का उल्लेख है।

12. बारहवें **शरीर** पद में पांच शरीरों की अपेक्षा चौबीस दण्डकों में से कितने शरीर हैं? तथा इन सभी में बुद्ध, मुक्त कितने–कितने और कौनसे शरीर होते हैं? आदि का वर्णन है।
13. तेरहवें **परिणामपद** में जीव के गति आदि दस परिणामों और अजीव के बंधन आदि दस परिणामों का वर्णन है।
14. चौदहवें **कषायपद** में क्रोधादि चार कषाय, उनकी प्रतिष्ठा, उत्पत्ति, प्रभेद तथा उनके द्वारा कर्मप्रकृतियों के चयोपचय एवं बन्ध की प्ररूपणा की गई है।
15. पन्द्रहवें **इन्द्रियपद** में दो उद्देशक हैं। प्रथम में पांचों इन्द्रियों के संस्थान, बाहल्य आदि २४ द्वारों से विचारणा की है। दूसरे में इन्द्रियोपचय, इन्द्रियनिर्वर्तना, निर्वर्तनासमय, इन्द्रियलब्धि, इन्द्रिय–उपयोग आदि तथा इन्द्रियों की अवगाहना, अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा आदि १२ द्वारों से चर्चा की गई है। अन्त में इन्द्रियों के भेद-प्रभेद की चर्चा है।
16. सोलहवें **प्रयोगपद** में सत्यमन प्रयोग आदि १५ प्रकार के प्रयोगों का २४ दण्डकवर्ती जीवों की अपेक्षा विचार किया गया है। अन्त में ५ प्रकार के गतिप्रपात का चिन्तन है।
17. सतरहवें **लेश्यापद** में ६ उद्देशक हैं। प्रथम में समकर्म, समवर्ण, समलेश्या, समवेदना, समक्रिया और समआयु का अधिकार है। दूसरे में कृष्णादि ६ लेश्याओं के आश्रय से जीवों का निरूपण किया है। तीसरे में लेश्या सम्बन्धी प्रश्नोत्तर हैं। चतुर्थ में परिणाम, रस, वर्ण, गन्ध, अवगाढ़, वर्गणा, स्थान, अल्पबहुत्व आदि का अधिकार है। पांचवे में लेश्याओं के परिणाम हैं। छठे में जीवों की लेश्याओं का वर्णन है।
18. अठारहवें पद का नाम **कायस्थिति** है। जीव–अजीव दोनों अपनी-अपनी पर्याय में कितने काल तक रहते हैं, इसका वर्णन है।
19. उन्नीसवें **सम्यक्त्व** पद में २४ दण्डकवर्ती जीवों में क्रमशः सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि व मिश्रदृष्टि का विचार किया है।
20. बीसवें **अन्तक्रियापद** में कौनसा जीव अन्तक्रिया कर सकता है और क्यों? का वर्णन है। अन्तक्रिया शब्द वर्तमान भव का अन्त करके नवीन भव प्राप्ति के अर्थ में भी हुआ है, जिसका २४ दण्डक के जीवों के बारे में विचार किया गया है। कर्मों की अन्तरूप अन्तक्रिया तो एकमात्र मनुष्य ही कर सकते हैं, इसका ६ द्वारों के माध्यम से वर्णन है।
21. इक्कीसवें **अवगाहना संस्थान** पद में शरीर के भेद, संस्थान, प्रमाण, पुद्गलों के चय, पारस्परिक संबंध उनके द्रव्य, प्रदेश तथा अवगाहना के अल्पबहुत्व की प्ररूपणा है।
22. बावीसवें **क्रियापद** में कायिकी आदि ५ क्रियाओं का तथा इनके भेदों की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपेक्षा समस्त संसारी जीवों का विचार है।

23. तेवीसवें **कर्मप्रकृति** पद में २ उद्देशक हैं। प्रथम में ज्ञानावरणीय आदि ८ कर्मों में से कौन जीव कितनी प्रकृतियां बांधता है, इसका विचार है तथा दूसरे में कर्मों की उत्तरप्रकृतियों और उनके बन्ध का वर्णन है।
24. चौबीसवें **कर्मबंध** पद में ज्ञानावरणीय आदि में से किस कर्म को बांधते हुए जीव कितनी प्रकृतियों को बांधता है? का वर्णन है।
25. पच्चीसवें **कर्मवेद** पद में ज्ञानावरणीयादि कर्मों को बांधते हुए जीव कितनी प्रकृतियों का वेदन करता है?, इसका विचार किया गया है।
26. छब्बीसवें **कर्मवेदबन्ध** पद में ज्ञानावरणीयादि कर्मों का वेदन करते हुए जीव कितनी प्रकृतियों को बांधता है? यह बताया गया है।
27. सत्तावीसवें **कर्मवेदपद** में ज्ञानावरणीयादि कर्मों का वेदन करते हुए जीव कितनी कर्म प्रकृतियों का वेदन करता है? का वर्णन है।
28. अट्ठावीसवें **आहारपद** में दो उद्देशक हैं। प्रथम में सचित्ताहारी आहारार्थी कितने काल तक किसका आहार करता है? वह सर्वात्म प्रदेशों से आहार करता है या अमुक भाग से? क्या सर्वपुद्गलों का आहार करता है? किस रूप में उसका परिणमन होता है? लोमाहार आदि क्या है? इसका विचार है दूसरे उद्देशक में आहार, भव्य, संज्ञी, लेश्या, दृष्टि आदि तेरह अधिकार हैं।
29. उनतीसवें **उपयोग पद** में दो उपयोगों के प्रकार बताकर किस जीव में कितने उपयोग पाये जाते हैं? का वर्णन है।
30. तीसवें **पश्यत्ता** पद में ज्ञान और दर्शन, ये उपयोग के २ भेद बताकर इनके प्रभेदों की अपेक्षा जीवों का विचार किया गया है।
31. इकतीसवें **संज्ञी** पद मे संज्ञी, असंज्ञी, नोसंज्ञी की अपेक्षा जीवों का विचार किया है।
32. बत्तीसवें **संयत** पद में संयत, असंयत और संयातासंयत की दृष्टि से जीवों का विचार किया है।
33. तेतीसवें **अवधिपद** में विषय, संस्थान, अभ्यन्तावधि, बाह्यावधि, देशावधि, सर्वावधि, वृद्धि--अवधि, प्रतिपाती और अप्रतिपाती इन द्वारों से विचारणा की गई है।
34. चौंतीसवें **प्रविचारणा** पद में अनन्तरागत आहारक, आहारविषयक आभोग—अनाभोग, आहार रूप से गृहीत पुद्गलों की अज्ञानता, अध्यवसायकथन, सम्यक्त्वप्राप्ति तथा कायस्पर्श, रूप, शब्द, मन से संबंधित प्रविचारणा (विषयभोग) एवं उनके अल्पबहुत्व का वर्णन है।
35. पैंतीसवें **वेदनापद** में शीत, उष्ण, शीतोष्ण, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, शारीरिक, मानसिक, शारीरिक—मानसिक साता, असाता, साता—असाता, दुःख, सुख, अदुःखसुखा, आभ्युपगमिकी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औपक्रमिकी, निदा एवं अनिदा नामक वेदनाओं की अपेक्षा जीवों का विचार किया गया है।

36. छत्तीसवें **समुद्घात** पद में में वेदना, कषाय, मरण, वैक्रिय, तैजस, आहारक और केवली समुद्घात की अपेक्षा जीवों की विचारणा की गई है। इसमें केवली समुद्घात का विस्तृत वर्णन है।

प्राचार्य, श्री महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ, जलगांव
319, भीकमचन्द जैन नगर, प्रिम्पाला रोड़, जलगाव–425001

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org